www.aisectuniversityjharkhand.ac.in | Follow us on:

AISECT UNIVERSITY™

JHARKHAND, HAZARIBAG AN AISECT GROUP UNIVERSITY

Recognized by : UGC

(B.A.HistoryHon's – Sem. I) & B.A - (G.E) - SEM I

(History of India from earliest time to 1200 AD)

Contact us:

8252299990

8404884433

AISECT University, Hazaribag

Matwari Chowk, in front of Gandhi Maidan, Hazaribag (JHARKHAND)-825301

www.aisectuniversityjharkhand.ac.in info@aisectuniversityjharkhand.ac.in

History of India form earliest time to 1200 AD

BA – Sem. 1 & BA – (G.E)-1 Sem.

इतिहास की अवधारणा (Concept of History)

इतिहास की अवधारणा प्रत्येक युग में परिवर्तित होती रही है। युग और परिवेश इतिहास की अवधारणा को लगातार बदलते रहते है।

इतिहास का अर्थ होता है – ''निश्चित रूप से ऐसा हुआ''।

इतिहास की अवधारणा सदैव उद्देश्य परक रही है। भारतीयों ने अपने जीवन के उद्देश्य के अनुरूप ऐतिहासिक तथ्यों को प्रस्तुत करने का माध्यम अपनाया था। इतिहास समय काल का एक बहता हुआ दरिया है, इसमें संपूर्ण मानव जीवन, उसके सुख–दुख और भौतिक आध्यात्मिक जीवन चलता रहता है।

इतिहास की अवधारणा को चार युगों में विभाजित किया गया है:–

1. कृत :– यह समय मानव जीवन का स्वर्ण युग था। इस समय सभी सुख – सुविधा से रहते थे।

2. त्रेता :– इस युग में मानव जीवन के सुख–सुविधा में ह्रास के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

3. द्वापर :– यह संघर्ष का युग माना जाता है। इस समय मानव दुःख से परिचित होत है। मानव जीवन में अनेक प्रकार की परेशानियाँ और समस्यायें आने लगी।

4. कलियुग :– इस युग में मानव का जीवन दुखों से भर गया। यहाँ मानव का भौतिक जीवन प्रधान हो गया और धर्म का वास्तविक स्वरूप विलुप्त होता गया। धर्म का स्थान पाखण्ड ने ले लिया। पाप का बोलबाला हो गया।

इतिहास का सीमा क्षेत्र (Scope of History)

आज इतिहास मात्र राजा, रानियों, दरबारियों, प्रशासक एवं व्यक्ति – विशेष तक सीमित न रहकर समाज एवं संस्कृति के प्रत्येक पक्ष को अपने दायरे मे ले चुका है। आज राजनीतिक इतिहास के स्थान पर समाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर विशेष जोर दिया जा रहा है। डी. डी. कौशाम्बी ने भी राजनीतिक इतिहास के स्थान पर प्राचीन भारतीय समाज, अर्थव्यवस्था एवं संस्कृति के इतिहास को उत्पादन की शक्तियों और सम्बन्धों के विकास क अभिन्न रूप में प्रस्तुत करते हुए इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या प्रस्तुत की है। इनके पश्चात और विशेषतः वर्तमान में इतिहास के अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रियाओं पर प्रमुख जोर दिया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त अन्य कई क्षेत्रों का इतिहास के अन्तर्गत अध्ययन किया जाता है, जो इस प्रकार है :–

1. राजनयिक क्षेत्र का इतिहास
2. औपनिवेशिक इतिहास का क्षेत्र
3. संसदीय इतिहास का क्षेत्र
4. सेनिक इतिहास (महापुरूषों, महानायकों एवं महापात्रों) का इतिहास क्षेत्र
5. इतिहास दर्शन का क्षेत्र
6. मानव सभ्यता का इतिहास क्षेत्र
7. जनजातियों का इतिहास क्षेत्र
8. भौगोलिक इतिहास क्षेत्र
9. विश्व इतिहास क्षेत्र
10. स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास क्षेत्र
11. विकास का इतिहास क्षेत्र

किसी एक क्षेत्र में इतिहास को बाँधा नही जा सकता।

इतिहास का परिभाषा (Defination of History):-

आंग्ल व ग्रीक से उत्पत्ति – इतिहास अंग्रेजी शब्द History से बना है। History शब्द का उद्‌गम ग्रीक शब्द History से हुआ है, जिसका अर्थ है, ''वास्तविक रूप से क्या घटित हुआ है।'' अर्थात् जानना या ज्ञात करना। History शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग यूनानी इतिहासकार हेरोडोट्स ने किया था।

संस्कृत से उत्पत्ति – संस्कृत से इतिहास शब्द की व्युत्पत्ति 'इति + ह+ आस' से हुई। जिसका शाब्दिक अर्थ है, '' निश्चित रूप से ऐसा हुआ।'' सामान्य शब्दों में इतिहास शब्द का अर्थ ''मानव जाति का अतीत है।''

इतिहास का महत्त्व (Significance of History):-

इतिहास मानवीय जीवन के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अतीत के आधार के बिना भविष्य और वर्तमान दोनों ही महत्त्वहीन है। किसी भी राष्ट्र का विकास अतीत की उपलब्धियों के आधार पर ही सही दिशा धारण करता है। इतिहास का महत्त्व कई दृष्टियों से आँका जा सकता है। जैसे –

1. इतिहास के अध्ययन से गलत धारणाओं का अन्त होता है–
2. इतिहास प्रेरणाप्रद होता है–
3. इतिहास विवेक और ज्ञान प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है –
4. जीवन मूल्यों का अक्षय स्त्रोत है –

भारत का पर्यावरण

Environment of India

मनुष्यों और अन्य प्राणी के चारों और पाया जाने वाला वातावरण ही पर्यावरण कहलाता है अर्थात् जो हमे चारों ओर से घेरे हुए है वह पर्यावरण है।

विशेषताएः–

1. जीवों के चारों और की वस्तुएँ पर्यावरण का निर्माण करती है।
2. पर्यावरण में जीवों का परस्पर सहावास अनिवार्य लक्षण है।
3. पर्यावरण सदैव बदलता रहता है।
4. पर्यावरण परिवर्तनों के प्रति जीव अनुकूलता उत्पन्न करते रहते है।
5. पर्यावरण स्वनियंत्रण और स्वपोषण पर आधारित है।
6. पर्यावरण में विशिष्ट भौतिक क्रियायें कार्यरत रहती है।
7. पर्यावरण जैव संसाधनों का अपार भण्डार होता है।

तत्त्व :–

1. जैविक :– मानव, पशु – पक्षी, पेड़–पौधे, सूक्ष्मप्राणी
2. भौतिक – वायुमण्डील तत्त्व , स्थल तत्व, जलीय तत्व

प्रागैतिहासिक काल (Pre-Historic Period)

प्रागैतिहासिक काल का अर्थ है इतिहास के पूर्व का अर्थात् जिसका कोइ लिखित साक्ष्य उपलब्ध नही हो उस प्रागैतिहास के बीच की विभाजक रेखा है। जिस काल के अध्ययन के लिए लिखित सामग्री उपलब्ध सामग्री उपलब्ध नहीं है उसे प्रागैतिहासिक काल कहा जाता है।

प्रागैतिहासिक काल को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया गया है –

1. पूर्व पाषाण काल (पेलिऑलिथिक एज) –5,00,000 ई पू. से 9000 ई पू. तक। इस युग को आखेटक और खाद्य संग्राहक मानव के रूप में जाना जाता है। इसे तीन भागों मे बॉटा गया है –
   a. निम्न पुरापाषाण युग – 5,00,000 ई.पू. से 50,000 ई. पू. तक इसे हस्तकुठार संस्कृति के नाम से जानते है। इसका अर्थ है पत्थर के शल्क उतारकर बनाए गए हथियार संस्कृति।
   b. मध्य पुरापाषाण युग – 50,000 ई.पू. से 40,000 ई. पू. तक। इसे फ्लेक उद्योग संस्कृति के नाम से जानते है। इसका अर्थ है पत्थर के शल्क उतारकर बनाए गए हथियार संस्कृति।
   c. उत्तरपुरपाषाण युग – 40,000 ई.पू. से 9,000 ई. पू. तक। इस युग की विशेषता है, होमोसेपिएंस मानव का उदय।
2. मध्य पाषाण काल (मिसोलिथिक एज):– 9000 ई. पू. से 4000 ई. पू. तक। इसे आखेटक एवं पशुपालक संस्कृति के नाम से जानते हैं।
3. नवपाषाण काल (नियोलिथिक एज):– 4000 ई. पू. से 2500 ई. पू. तक। इसे खाद्य उत्पादक संस्कृति कहा जाता है।

सैन्धव सभ्यता

परिचय–

भारत का इतिहास सिंधु घाटी सभ्यता से प्रारंभ होता है जिसे हम हड़प्पा सभ्यता के नाम से भी जानते हैं।

यह सभ्यता लगभग 2500 ईस्वी पूर्व दक्षिण एशिया के पश्चिमी भाग मैं फैली हुई थी,जो कि वर्तमान में पाकिस्तान तथा पश्चिमी भारत के नाम से जाना जाता है।

संधु घाटी सभ्यता मिस्र,मेसोपोटामिया,भारत और चीन की चार सबसे बड़ी प्राचीन नगरीय सभ्यताओं से भी अधिक उन्नत थी।

1920 में, भारतीय पुरातत्त्व विभाग द्वारा किये गए सिंधु घाटी के उत्खनन से प्राप्त अवशेषों से हड़प्पा तथा मोहनजोदडो जैसे दो प्राचीन नगरों की खोज हुई।

भारतीय पुरातत्त्व विभाग के तत्कालीन डायरेक्टर जनरल जॉन मार्शल ने सन 1924 में सिंधु घाटी में एक नई सभ्यता की खोज की घोषणा की।

हड़प्पा सभ्यता के महत्त्वपूर्ण स्थल-

स्थल	खोजकर्त्ता	अवस्थिति	महत्त्वपूर्ण खोज
हड़प्पा	दयाराम साहनी (1921)	पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में मोंटगोमरी जिले में रावी नदी के तट पर स्थित है।	▪ मनुष्य के शरीर की बलुआ पत्थर की बनी मूर्तियाँ ▪ अन्नागार ▪ बैलगाड़ी
मोहन जोदड़ो (मृतकों का टीला)	राखलदास बनर्जी (1922)	पाकिस्तान के पंजाब प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के तट पर स्थित है।	▪ विशाल स्नानागर ▪ अन्नागार ▪ कांस्य की नर्तकी की मूर्ति ▪ पशुपति महादेव की मुहर ▪ दाड़ी वाले मनुष्य की पत्थर की मूर्ति ▪ बुने हुए कपडे
सुत्का न्गेडोर	स्टीन (1929)	पाकिस्तान के दक्षिण-पश्चिमी राज्य बलूचिस्तान में दाश्त नदी के किनारे पर स्थित है।	▪ हड़प्पा और बेबीलोन के बीच व्यापार का केंद्र बिंदु था।

चन्हुद ड़ो	एन .जी. मजूमदार (1931)	सिंधु नदी के तट पर सिंध प्रांत में।	▪ मनके बनाने की दुकानें ▪ बिल्ली का पीछा करते हुए कुत्ते के पदचिन्ह
आमरी	एन .जी . मजूमदार (1935)	सिंधु नदी के तट पर।	▪ हिरन के साक्ष्य
कालीबं गन	घोष (1953)	राजस्थान में घग्गर नदी के किनारे।	▪ अग्नि वेदिकाएँ ▪ ऊंट की हड्डियाँ ▪ लकड़ी का हल
लोथल	आर. राव (1953)	गुजरात में कैम्बे की कड़ी के नजदीक भोगवा नदी के किनारे पर स्थित।	▪ मानव निर्मित बंदरगाह ▪ गोदीवाडा ▪ चावल की भूसी ▪ अग्नि वेदिकाएं ▪ शतरंज का खेल
सुरको तदा	जे.पी. जोशी (1964)	गुजरात।	▪ घोड़े की हड्डियाँ ▪ मनके
बनाव ली	आर.एस. विष्ट (1974)	हरियाणा के हिसार जिले में स्थित।	▪ मनके ▪ जौ ▪ हड़प्पा पूर्व और हड़प्पा संस्कृतियों के साक्ष्य
धौला वीरा	आर.एस. विष्ट (1985)	गुजरात में कच्छ के रण में स्थित।	▪ जल निकासी प्रबंधन ▪ जल कुंड

सैन्धव सभ्यता के धर्म और धार्मिक विश्वास

सैन्धव सभ्यता के धार्मिक विश्वासों को जानने के लिए विद्वान सैंधव स्थलों से प्राप्त मूर्तियों व प्रतिमाओं पर ही निर्भर है क्योकि इस सभ्यता के किसी भी स्थल से किसी मंदिर, समाधि आदि का अवशेष प्राप्त नहीं होते है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ों, चन्हूदड़ों आदि स्थलों से नारी मूर्तियों की प्राप्ति, मोहरो के नारी के चित्रण, मुद्रा पर नग्न स्त्री के गर्भ से पौधा निकलने के चित्रण, एक अन्य चित्र

में स्त्री को बकरे की बलि के चित्रण के कारण सर जॉन मार्शल ने सैन्धव सभ्यता में मातृदेवी की पूजा का अनुमान लगाया है।

मातृदेवी के समान ही सैन्धव सभ्यता में शिव पूजा का व्यापक प्रचलन था। मोहनजोदड़ों से प्राप्त एक मुद्रा में एक योगी को पायी ओर चीता व हाथी और बाई और गैंडा व भैसा चित्रित किया गया है।

- शिव व मातृदेवी की पूजा के अतिरिक्त सैन्धव निवासी गैंडा, बैल, चीता, हाथी, भैसा, कूबड़दार बैल जैसे पशुओं तथा 'फाख्ता' पक्षी एवं पीपल वृक्ष को पवित्र मानते थे इसके अतिरिक्त वे जल, स्वास्तिक, चक्र तथा नाग की पूजा भी करते थे। सैन्धव सभ्यता में प्रचलित धार्मिक परम्परायें वर्तमान में हिन्दू धर्म में किसी न किसी रूप में प्रचलित है।

लोथल तथा कालीबंगन से यज्ञीय वेदियों के साक्ष्य प्राप्त होते है। इस प्रकार कहा जा सकता है सैन्धव सभ्यता में मातृदेवी, शिव, पशु–पक्षियों, वृक्षों, मांगलिक प्रतीकों आदि की पूजा का विधान था।

इस सभ्यता मे पूज्य माने जाने वाले स्वास्तिक, स्तम्भ आदि प्रतीकों को आज भी पवित्र माना जाता है। सैन्धव निवासी ताबीज धारण करते थे। सिन्धू सभ्यता में शिव व लिंग की पूजा की जाती थी, जो आज भी प्रचलित है।

त्रृग्वैदिक काल की राजनैतिक व्यवस्था

आर्यो का प्रसार अफगानिस्तान से गंगा घाटी तक माना जाता है। ऋग्वेद में यत्र – तत्र अनेक नदियों और पर्वतों के नाम मिलते है। हिमालय पर्वत का स्पष्ट उल्लेख हुआ है। हिमालय की एक चोटी को 'मूजवन्त' कहा गया है, जो सोम के लिए प्रसिद्व थी। पश्चिम की ओर (कुभा) काबुल, क्रमु (कुर्रम) गोमती, सुवास्तु नदियों के उल्लेख से यह पता चलता है कि अफगानिस्तान भी उस समय भारत का ही अंग था । इसके पश्चात पंजाब की पाँच नदियों – सिन्धु, विस्ततता(झेलम), चेनाब, रावी, विपासा (व्यास) का उल्लेख हुआ है।

यह सम्पूर्ण भौगोलिक प्रदेश अनेक आर्यजनों मे ंविभाजित था। 'जन' के प्रमुख को राजा कहा जाता था। राजनीतिक संगठन की सबसे छोटी इकाई 'कुल' अथवा 'परिवार' था जिसका प्रमुख पिता होता था और वह 'कुलप' कहा जाता था। 'कुल' मिलकर 'ग्राम' का निर्माण करते थे। ग्राम आत्म–निर्भर व दुर्गीकृत होते थे। ग्राम का मुखिया ग्रामीणों कहलाता था। ग्राम मिलकर 'विश' बनाते थे। जिसका प्रमुख 'विशपति' कहलाता था। विशों के समूह को 'जन' आपस में युद्वोन्मुख रहते थे इसका उदाहरण ऋग्वेद में उल्लखित दशराज्ञ युद्व है जो भरत जन के राजा सुदास (पुरोहित–वशिष्ठ) और दस राजाओं के संघ (पुरोहित–विश्वमित्र) के मध्य रावी नदी के किनारे हुआ था। जिसमें भरत जन विजयी रहा और भरत जन नाम पर ही देश का नाम भारत पड़ा। राजा की स्थिति कबायली मुखिया जैसी थी न कि देवीय। राजा युद्व में जन की प्रजा मिलकर राजा का चुनाव करती थी कालान्तर मे राजा का पद आनुवंशिक हो गया। 'ग्रामणी' ग्राम प्रमुख के रूप में प्रशासनिक व सैनिक कार्य भी करता था। वह ग्रामीण जनता के हितों का प्रतिनिधित्व करता था।

उत्तर वैदिक काल में हुए राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक परिवर्तनों का उल्लेख :–

समाज में संयुक्त परिवार की प्रथा प्रचलित थी परिवार पितृसत्तात्मक थे। वर्ण व्यवस्था' कठोर होकर जाति के रूप में परिवर्तित होने लगी। समाज में अनेक धार्मिक श्रेणियों का उदय हुआ जो कठोर होकर विभित्र जातियों में बदलने लगी व्यवसाय आनुवंशिक होने लगे। अन्तर्वर्ण विवाह सम्भव था। शुद्रो का यज्ञ करने की मनाही नहीं थी।

स्त्रियों की प्रतिष्ठा सामाजिक एवं धार्मिक रूप से पूर्व वैदिक काल की अपेक्षा कम हुई। बाल विवाह नही होते थे। बहुविवाह , विधवा विवाह का प्रचलन था। स्त्रियों को शिक्षा दी जाती थी।

उत्तर वैदिककाल में भी कृषि उत्पादन में एक महान परिवर्तन उत्पन्न कर दिया। खेत हलो द्वारा जोते जाते थे। गायों की पवित्रता बढ़ गयी। गोवध के लिए मृत्युदण्ड। हाथी का भी पालन प्रारम्भ हो गया।

इस काल में व्यापार व वाणिज्य प्रगति पर था। 'श्रेष्ठिन' व्यापारयो की श्रेणी का प्रधान व्यापारी होता था। निएक, शतमान, पाद, कृष्णल आदि माप की विभिन्न इकाइयाँ थी। सिक्के का नियमित प्रचलन नहीं था। जल तथा थल दोनों मार्गो से व्यापार होते थे। समाज में स्वर्णकार, रथकार, चर्मकार मुछए, लुहार, नायक, नर्तक, कुम्भकार, वैद्य ज्योतिषी नाई आदि व्यासायिक वर्ग था। लोहे के ज्ञान के क्रांतिकारी परिवर्तन किया। उत्तरवैदिक साहित्य में लोहे को कृष्णअयस कहा गया। आर्य लोहे के अतिरिक्त टिन, ताँबा, चाँदी, शीशा आदि धातुओं से भी परिचित हो चुके थे। इन धातुओं से कई प्रकार के औजार हथियार एवं आभूषण बनाये जाते थे। इन्द्र, वरूण, आदि का स्थान प्रजापति, विष्णु एवं रूद्र–शिव ने ले लिया। अंधविश्वास को स्थान धर्म मे मिल गया।

वर्ण व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ

मनु के अनुसार सृष्टि की रक्षा के लिए ब्रह्मा ने मुख से ब्राह्ममण भुजाओं से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य तथा पैरों से शुद्र को प्रजनित किया। ब्राह्ममणों का स्थान सभी वर्णो से श्रेष्ठ कहा गया है। यहाँ यह भी कहा गया है कि समाज में केवल चार ही वर्ण है :–

ब्राह्ममण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद।

गीता में भगवान् श्री कृष्ण ने कहा कि गुण और कर्म के द्वारा ही मैनें चारों वर्णो को उत्पन्न किया है। मैं ही उन्हें बनाने वाला तथा नष्ट करने वाला हूँ।

प्रमुख विशेषताएँ :–

1. वर्ण–व्यवस्था परम्परागत हो गयी।
2. वर्ण–व्यवस्था को व्यवसाय और जन्म पर आधारित बना दिया गया।
3. उच्च वर्ण धीरे–धीरे निम्न वर्ग का शोषण करने लगे।
4. शूद्रों की गणना आर्य वर्ण में की जाने लगी।
5. समाज में एक ही प्रकार का विवाह प्रचलित था।
6. वर्ण व्यवस्था कठोर होने लगी।
7. गोत्र का प्रयोग व्यावहारिक क्षेत्र में होने लगा।
8. वर्ण पर आधारित समाज का विभाजन होने लगा।
9. वणगत नियमों को तोड़ना आसान नहीं रहा।
10. अनुलोम प्रकार का विवाह प्रमुख होने लगा था।
11. उच्च वर्ण का व्यक्ति शूद्र की स्त्री से भोग कर सकता था पर विवाह नही।
12. व्यवसाय के आधार पर श्रेणियों का संगठन होने लगा था, क्योकि व्यवसाय परम्परागत हो गये थे।
13. बाद में जाति व्यवस्था का आधार भी वर्ण व्यवस्था ही बन गई।
14. वैश्यों की स्थिति में गिरावट होने लगा और वे शूद्र हो गये। आदि।

जाति प्रथा की विशेषताएँ

- प्राचीन भारतीय शास्त्रों में जाति शब्द की व्युप्पति जनि प्रादुर्भाव शब्द से ज्ञात होती है। इसका अभिप्राय है कि जाति व्यवस्था का मूल आधार जन्म है।
- श्री मदन और मजुमदार के अनुसार 'जाति एक बन्द व्यवस्था है।'
  इस प्रकार जाति से हमेशा अभिप्राय उन परिवारों के संगठन से है 'जिसका एक व्यवसाय होता है। जिनकी सदस्यता जन्मजात होती है तथा जिनके सदस्य उस जातीय समुदाय के नियमों का पूर्णतया पालन करते है।

विशेषताएँ :–

एन.के.दत्ता के अनुसार जाति प्रथा की 6 विशेषताएँ है :–

1. एक जाति के सदस्य जाति के बाहर विवाह नहीं कर सकते।
2. प्रत्येक जाति में दूसरी जातियों के साथ खाने–पीने के संबंध में कुछ न कुछ प्रतिबंध होते है।
3. अधिकतर जातियों के पेशे निश्चित है।
4. जातियों में एक उँच–नीच का संस्तरण है, जिसमें ब्राह्मण जाति की स्थिति सर्वमान्य रूप से सबसे ऊपर है।
5. जन्म ही एक व्यक्ति की जाति को जीवनपर्यन्त निश्चित करता है, केवल जाति के नियमों को तोड़ने पर उसे जाति से बहिष्कृत किया जा सकता है, नही तो एक जाति से दूसरी जाति में जाना संभव नही है।
6. सम्पूर्ण व्यवस्था ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा पर निर्भर है।

डॉ धुरिये के अनुसार विशेषताएँ :–

1. समाज का खण्डनात्मक विभाजन
2. संस्तरण
3. भोजन और सामाजिक सहवास पर प्रतिबंध
4. विभिन्न जातियों की सामाजिक और धार्मिक नियोग्यताएँ और विशेषाधिकार
5. पेशों के अप्रतिबंधित चुनाव का अभाव
6. विवाह संबंधी प्रतिबंध

सोलह संस्कार :–

भारतीय समाज के हिन्दू वर्ग में जीवन को परिशुद्व बनाने के लिए संस्कारों को अपनाया गया। संस्कार वह पद्वति है, जो मनुष्य को जन्म के बाद हिन्दुत्व में दीक्षित करती है। इनके माध्यम से कुछ ऐसे मूल्य मनुष्य को प्रतिरोपित कर दिये जाते हैं जो कि उसे हिन्दुत्व की सीमा नही लाँघने देते। संस्कार का शाब्दिक अर्थ शुद्वि, सुधार या सफाई माना जाता है। संस्कार वे प्रणालियाँ है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक उसके जीवन को संस्कारित करते रहते है।

डॉ राजवली पाण्डेय के अनुसार – '' संस्कार का अभिप्राय शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं तथा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक आदि से । जिससे वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य हो सके।

हिन्दू व्यक्ति का जीवन इन संस्कारों से घिरा हुआ होता है। यह संस्कार 16 होते हैं, जो कि व्यक्ति के जन्म पहले से ही प्रारंभ हो जाते है। जब माँ गर्भ में बच्चा आता है, तो कुछ संस्कार माँ को करने पड़ते है। संस्कारों के बिना जीवन न तो पूर्ण माना जाता और न शुद्व माना जाता।

संस्कारों के प्रकार :–

हिन्दू के जीवन में कितने संस्कार होना चाहिए इसके संबंध में धर्मशास्त्रकारों में मतभेद है। गौतम धर्म सूत्र में संस्कारों की संख्या 40 बताई है। वैखानस गृहसूत्र अट्ठारह संस्कारों का उल्लेख करता है। अलग–अलग जगह उल्लेखित संस्कारों को समन्वित करके 16 संस्कारों को निश्चित किया गया है, जो कि इस प्रकार है :–

1. गर्भाधान
2. पुसवन
3. सोमानतान्नयन
4. जातकर्म
5. नामकरण
6. निष्क्रमण
7. अन्नप्राश्न
8. चूड़ाकर्म
9. कर्णछेदन
10. विद्यारम्भ
11. उपनयन
12. वेदारंभ
13. केशान्त
14. समापवर्तन
15. विवाह
16. अन्त्येष्टि

महाजनपदों का उदय

बुद्व के जन्म के पूर्व लगभग छठी शताब्दी ई॰पू॰ में भारत वर्ष 16 महाजनपदों में बँटा हुआ था, जिसका उल्लेख हमें बौद्व ग्रंथ के अंगुत्तरनिकाय में मिलता है।

जैन ग्रन्थ 'भगवतीसूत्र' मे भी इन 16 जनपदों की सूची मिलती है, किन्तु उसमें नाम कुछ भिन्न प्रकार का है।

उपर्युक्त राज्य (महाजनपद) दो प्रकार के थे– राजतंत्रात्मक राज्य एवं गणतंत्रात्मक राज्य। अंग, मगध, काशी, कौशल, चेदि, वत्स, कुरू, पांचाल, मतस्य, शूरसेन, अश्मक, अवन्ति, गान्धार तथा कम्बोज राजतन्त्रात्मक राज्य थे, जबकि वज्जि और मल्ल गणतंत्र थे। ऐसे राज्यों का शासन राजा द्वारा न होकर गण अथवा संघ द्वारा होता था।

क्र. सं.	महाजनपद	राजधानी
1.	अंग	चम्पा
2.	मगध	गिरिव्रज (राजगृह)
3.	काशी	वाराणसी
4.	काशल	श्रावस्ती/अयोध्या
5.	वज्जि	विदेह एवं मिथिला
6.	मल्ल	कुशावती (कुशीनगर)

7.	चेदि	शक्तिमती
8.	वत्स	कौशाम्बी
9.	कुरू	इन्द्रप्रस्थ
10.	पांचाल	उत्तर पंचाल – अध्छित्र
11.	मत्स्य	दक्षिण पंचाल – कापिल्य
12.	शूरसेन	विराट – नगर
13.	अश्मक	पोतन या पोटनी
14.	अवन्ति	उत्तरी अवन्ति – उज्जयिनी
15.	गन्धार	तक्षशिला
16.	कम्बोज	हाटक

जैनधर्म

'जैन' शब्द 'जिन' से बना है, जिसका अर्थ – विजेता अर्थात् जिसने इंद्रियों को जीत लिया है। कर्म और अहिंसा होने के कारण जैन धर्म को प्रारंभ में बौद्व धर्म की एक शाखा मात्र माना जाता था।

जैन धर्म में 24 तीर्थंकरो के होने की बात कही जाती है, जो इस प्रकार है –

1. ऋषभदेव
2. अजितनाथ
3. साम्बनाथ
4. अभिनन्दन
5. सूमतिनाथ
6. पद्मप्रभु
7. सुपार्श्वनाथ
8. चन्द्रप्रभु
9. पुष्पदत्त
10. शीतलनाथ
11. श्रयांशनाथ
12. वसुपूज्य
13. विमलनाथ
14. अनन्तनाथ
15. धर्मनाथ
16. शांति
17. अकुंयुनाथ
18. अरसनाथ
19. मल्लिनाथ
20. मुनिसुत्रतनाथ
21. नमि
22. नेमिनाथ
23. पार्श्वनाथ
24. महावीर

- जैन धर्म मे तीर्थंकर का अर्थ संसार सागर से पार कराने के लिए औरों का मार्ग बताने वाला होता है।
- ऋषभदेव को जैन धर्म के संस्थापक, प्रवर्तक एवं पहले तीर्थंकर के रूप में जाना जाता है।
- **महावीर स्वामी** –

24 वें तीर्थंकर एवं जैन धर्म के वास्तविक संस्थापक के रूप में महावीर स्वामी जाने जाते है। इनका जन्म 540 ई॰ पू॰ में वैशाली के निकट कुण्डग्राम में हुआ। बचपन का नाम वर्धमान महावीर था। वे वर्ण के क्षत्रिय एवं जाति के ज्ञातृक थे। पिता – सिद्वार्थ, माता– त्रिशाला। विवाह कुण्डिन्य गोत्र की कन्या यशोदा से हुआ। एक पुत्री के पिता बने। 30 वर्ष में महावीर

घर त्याग दियें। घर लागने के बाद संन्यासी हो गये। पार्श्वनाथ के शिष्य थे। 13 महीने के उपरान्त महावीर स्वामी पूर्णतया वस्त्र लागकर नंगे रहने लगे। इस प्रकार 12 वर्ष तक कठोर तपस्या के बाद 42 वर्ष की अवस्था में महावीर को जुम्भिक ग्राम के समीप ऋजुपालिका नदी के किनारे एक साल के वृक्ष के नीचे कैवलय (ज्ञान) प्राप्त हुआ। कैवल्य प्राप्त हो जाने के बाद महावीर स्वामी को 'केवलीन', 'जिन' (विजेता), अर्हं (योग्य) एवं निर्ग्रन्थ (बन्धन रहित) जैसी उपाधियाँ मिली।

बौद्व धम

बौद्व धर्म के प्रवर्तक बुद्व या सिद्वार्थ का जन्म कपिलवस्तु के लुंबिनी नामक ग्राम में शाक्य क्षत्रिय कुल में 563 ई॰पू॰ में हुआ था। पिता शुद्वोपन शाक्य गण के मुखिया थे। बुद्व के जन्म के कुछ दिन बाद ही इनकी माता महामाया का देहान्त हो गया, इनका पालन–पोषण विमाता प्रजापति गौतमी ने किया। 16 वर्ष की अवस्था में सिद्वार्थ का विवाह शाक्य कुल की कन्या यशोधरा से हुआ। एक पुत्र हुआ जिसका नाम 'राहुल' था।

सांसारिक समस्याओं से व्यथित होकर सिद्वार्थ ने 29 वर्ष की अवस्था में गृह त्याग दिया। इस त्याग को बौद्व ग्रंथो में 'महाभिनिष्क्रमण' कहा गया। उरूबेला (बोधगया) के लिए प्रस्थान किये। बिना अन्न–जल ग्रहण किये हुए 6 वर्ष की कठिन तपस्या के बाद 35 की आयु में वैशाख पूर्णिमा की रात एक पीपल के वृक्ष के नीचे सिद्वार्थ को ज्ञान प्राप्त हुआ। ज्ञान प्राप्ति के बाद इन्हे 'बुद्व' के रूप में जाना जाने लगा। बुद्व का एक अन्य नाम 'तथागत' भी मिलता है, जिसका अर्थ है – सत्य है ज्ञान जिसका। महात्मा बुद्व को शाक्य मुनि के रूप में भी वर्णन किया गया है। उरूवेला (बोधगया) से बुद्व सारनाथ आये, यहाँ पर उन्होने 5 ब्राह्मण संन्यासियों को अपना प्रथम उपदेश दिया, जिसे बोद्व ग्रंथो में धर्म चक्र प्रवर्तन' के नाम से जाना जाता है। सारनाथ में ही बुद्व ने 5 सन्यासियों के साथ संघ की स्थापना की । इनके महात्मा बुद्व धर्म में 'महापरिनिर्वाण' कहा जाता है।

बुद्व ने सांसारिक दु;खो के सम्बन्ध में चार आर्य सत्यों का उपदेश दिया। ये आर्य सत्य हैः –

1. दु;ख 2. दु;ख समुदाय 3. दु;ख निरोध, और 4. दु;ख निरोधगामिनी प्रतिपद्या

इन सांसारिक दु;खो से मुक्ति हेतु बुद्व ने अष्टांगिक मार्ग की बात कही।

ये साधन हैं –

1. सम्यक दृष्टि
2. सम्यक् संकल्प
3. सम्यक वाणी
4. सम्यक कर्मान्त
5. सम्यक् आजीव
6. सम्यक व्यायाम

7. सम्यक स्मृति
8. सम्यक समाधि

मौर्य साम्राज्य
(323 ई॰पू॰ से 184 ई॰ पू॰)

चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने गुरू विष्णुगुप्त अथवा चाणक्य की सहायता से नंद वंश के अंतिम शासक घनानंद को हराकर मौर्य साम्राज्य की स्थापना की।

अशोक (273 – 232 ई॰ पू॰)

बिन्दुसार की मृत्यु के उपरान्त अशोक विशाल मौर्य साम्राज्य की गद्दी पर बैठा। अशोक के जीवन की प्रारम्भिक जानकारी हमें बौद्व साक्ष्यों जैसे दिव्यावदान तथा सिंहड़गी ग्रंथो से मिलती है। सिंहली परम्पराओं के अनुसार अशोक के पुत्र महेन्द्र एवं पुत्री संघमित्रा। सिंहली अनुश्रति से ही यह ज्ञात होता है, कि अशोक ने अपने 99 भाइयों की हत्या की। करीब 4 वर्ष के सत्ता–संघर्ष के बाद अशोक का विधिवत् राज्याभिषेक 269 ई॰ पू॰ में हुआ। वैसे तो अशोक 273 ई॰ पू॰ में ही मगध के राजसिंहासन पर बैठ चुका था। सर्वप्रथम मास्की अभिलेख में अशोक नाम मिलता है। अपने क्षेत्रों के अनेक भागों को जीत कर मौर्य साम्राज्य में मिलाया। कल्हण की राजतरंगिणी के अनुसार अशोक ने कश्मीर में वितस्ता नदी के किनारे 'श्री नगर' नामक नगर की स्थापना की।

अशोक ने अपने अभिषेक के 8 वे वर्ष लगभग 261 ई॰ पू॰ में कलिंग पर आक्रमण किया।

अशोक का धम्म :–

अशोक के अपनी प्रजा के नैतिक विकास के लिए जिन आचारों की संहिता के पालन की बात कही उसे ही अभिलेखो में धम्म कहा गया। अशोक के धम्म की परिभाषा 'राहुलोवादसुत्त' से ली गयी है।

भ्रावू लधु शिलालेख में भी अशोक के धम्म का उल्लेख मिलता है।

मौर्य प्रशासन

मौर्य प्रशासन के अन्तर्गत ही भारत में पहली बार राजनीतिक एकता दिखने को मिली। इसमें सत्ता का केन्द्रीकरण अवश्य हुआ था, पर राजा अपने अधिकारों के प्रति जरा सा भी बर्बर नही होता था। मौर्यकाल काल मे गणराज्यों का ह्रास होने लगा था, जिसके परिणामस्वरूप राजतन्त्रात्मक व्यवस्था की स्थिति काफी मजबूत हो रही थी। राजा के पास समस्त अधिकार एवं शक्तियाँ होती रही थी। मुख्यतः उसके पास सैनिक, न्यायिक, वैद्यानिक एवं कार्यकारी माामलों का पूरा अधिकार होता था। राजा साम्राज्य के सभी महत्वपूर्ण पदो पर योग्य व्यक्ति की नियुक्ति करता था।

मौर्यकाल में सम्राट की सहायता के लिए एक 'मंत्रिपरिषद' की व्यवस्था होती थी, जिसमें 12, 16 या 20 सदस्य हुआ करते थे। इन सदस्यों को वेतन के रूप में करीब 12,000 पण वार्षिक मिलता था। मंत्रिपरिषद' का कोई भी निर्णय राजा मानने के लिए बाध्य नहीं था।

अर्थशास्त्र में शीर्षस्थ अधिकारी के रूप में तीर्थ का उल्लेख मिलता हैं इन्हें महामात्र भी कहा जाता था, जिनकी संख्या 18 होती थी । इनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तीर्थ एवं महापात्र मंत्री एवं पुरोहित होते थे। पुरोहित, महामंत्री एवं सेनापति को करीब 48,000 पण वार्षिक वेतन के रूप में मिलता था।

समाहर्त्ता – यह राजस्व विभाग का प्रमुख अधिकारी होता था।

कोषाध्यक्ष – यह राजकीय कोष का मुख्य अधिकारी होता था।

प्रदेष्टा – फौजदारी न्यायालय का न्यायाधीश

कर्मान्तिक – साम्राज्य के उद्योग – धन्धों का प्रमुख

दण्डपाल – सेना की सामग्री को एकत्र करने वाला अधिकारी

अन्तपाल – सीमावर्ती दुर्गो का रक्षक

दुर्गपाल – देश के अन्दर के दुर्गो का रक्षक

आन्तवैशिक – राजा की अंगरक्षक सेना का प्रमुख अधिकारी

आटविक – वन विभाग का प्रमुख अधिकारी

प्रांतीय शासन – इस समय प्रांत सबसे बडी प्रशासनिक इकाई के रूप में प्रचलित थे। अशोक ने विशाल मौर्य साम्राज्य को प्रशासन की सुविधा के लिए अनेक प्रान्तों में बाँट रखा था। जिसकी संख्या 5 थी।

<u>शुंगकालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक स्थिति :–</u>

1. इस वंश की स्थापना 185 ई॰ पू॰ में पुण्यमित्र शुंग द्वारा अंतिम मौर्य सम्राट वृहद्रथ की हत्या कर दी गयी। पुण्यमित्र 'शुंग ने शुंग वंश की स्थापना की। पुण्यमित्र शुंग ने दो अश्वमेघ यज्ञ किये और देश में फैली अराजकता को समाप्त किया। वैदिक धर्म की पुनः प्रतिष्ठा की। अतः शुंगकाल को वैदिक प्रतिक्रिया अथवा पुनर्जागरण का काल भी कहा गया है। पुण्यमित्र ने विदर्भ के युद्व में यज्ञसेन को परास्त किया। यवनो के आक्रमण को विफल किया। पंतजलि पुण्यमित्र के पुरोहित थे। इस तरह पुण्यमित्र शुंग को मगध में प्रथम ब्राह्मण राज्य स्थापित करने एवं ब्राह्मण धर्म के पुररूद्वार का श्रेय दिया जा सकता है।

शुंगकालीन समाज वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित था । चार वर्णों के अतिरिक्त अनेक बहुत सी जातियाँ पैदा हो गयी। जाति प्रथा कठोर हो गयी। मनुस्मृति को कुछ विद्वान शुंगकालीन रचना मानते है। मनुस्मृति के चारों वर्णो के लिए अलग – अलग कर्त्तव्यों का विधान किया गया। ब्राह्मणों के लिए शैक्षिक, क्षत्रियों के लिए युद्व, वैश्य वर्ग के लिए व्यापार तथा शुद्रों के लिए सेवा कार्य सुनिश्चित किये गये। इन चारों वर्गो में शुद्रो की दशा अत्यन्त हीन थी। उनके कत्तव्य तो थे किन्तु अधिकार नहीं। समाज में महिलाओं की स्थिति सन्तोषजनक थी। 8 प्रकार के विवाह प्रचलित थे। सती प्रथा के साक्ष्य नही मिलते है। बाल – विवाह होते थे।

शुंगकाल मे बहुसंख्यक जनता कृषि एवं पशुपालन पर आर्थिक रूप से निर्भर थी। अनेक व्यवसायिक वर्ग भी थे – चर्मकार, चित्रकार, कुम्हार , दर्जी लौहकार आदि। व्यापार उन्नति पर था। पाटलिपुत्र, वाराणसी तक्षशिला प्रचलन शुरू हो गया था।

वैदिक धर्म के साथ संस्कृत भाषा के लिए शुंगकाल में काल और स्थापत्य के क्षेत्र में भी उन्नति हुई। भरहुत, साँची, बेसनगर तथा बोध गया से प्राप्त अवशेष शुंगकालीन उत्कृष्ट कला के उदाहरण है। बोधगया के विशाल मंदिर के चारों और लगी पाषाण वेदिका भी शुंगकालीन है।

शुंगकाल में ब्राह्मण धर्म को प्रोत्साहन मिला। समाज में जातिगत कठोरता आयी। व्यापार समृद्व था। कला और स्थापत्य में उन्नति हुई।

<u>मालवा के परमार</u>

परमार वंशी शासक सम्भवतः राष्ट्रकूटों या फिर प्रतिहारों के सामंत थे। इस वंश के प्रारम्भिक शासक उपेन्द्र, वैरिसिंह प्रथम, सीयक प्रथम, वाक्पति प्रथम एवं वैरिसिंह द्वितीय थे। उपेन्द्र अथवा कृष्णाराज परमार वंश का संस्थापक था। परमारों की प्रारम्भिक राजधानी उज्जैन में थी पर कालान्तर में राजधानी धारा (मध्यप्रदेश) में स्थानान्तरित कर ली गई। इस वंश का प्रथम स्वतंत्र एवं प्रतापी राजा सीयक अथवा श्रीहर्ष था। उसने अपने वंश को राष्ट्रकूटों की अधीनता से मुक्त कराया।

वाक्पति मुंज (973 – 95 ई॰) – मुंज सीयक का दत्तक पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। उसने कलचुरी शासक युवराज द्वितीय तथा चालुक्य राजा तैलप द्वितीय को युद्व में परास्त किया। तैलप को मुंज ने करीब 6 बार युद्व में परास्त किया था। सातवी वार युद्व में बंदी बनाकर उसकी हत्या कर दी गई। मुंज एक सफल विजेता होने के साथ कवियों एवं विद्वानों का आश्रयदाता भी था। उसके बाद उसका छोटा भाई सिंधु राज शासक हुआ।

भोज (1000 – 55 ई॰) – सिंधुराज का पुत्र एवं उत्तराधिकारी भोज परमार वंश का योग्य एवं प्रतापी शासक था। उसका कल्याणी के चालुक्य एवं अन्हिलवाड़ के चालुक्यों से युद्व हुआ। गुजरात के सोलंकी एवं त्रिपुरा के कलचुरी के संघ ने मिलकर भोज की राजधानी धारा पर दो ओर से आक्रमण कर राजधानी को नष्ट कर दिया। भोज के बाद शासक जयसिंह ने शुत्रओं समक्ष आत्मसमर्पण कर मालवा से अपने अधिकार को खो दिया। भोज के साम्राज्य के अन्तर्गत मालवा, कोंकण, खान देश, भिलसा, डूगरपुर, वांसवाड़ा, चित्तौड़ एवं गोदावरी घाटी का कुछ भाग शामिल था। भोज एक पराक्रमी शासक होने के साथ ही विद्वान एवं विद्या तथा काल का उदार संरक्षक था। अपनी विद्वता के कारण ही उसने कविराज की उपाधि धारण की। भोज ने अनेक महल एवं मंदिरों का निर्माण करवाया, जिनमें सरस्वती मंदिर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके अलावा भोज ने भोजपुर नगर एवं भोजसेन नामक तालाब का भी निर्माण करवाया था। भोज ने उत्तराधिकारी जयसिंह के बाद इस वंश के अन्य शासक लक्ष्मण देव, विंध्यवर्मन, जगददेव, नरवर्मन, यशोवर्मन, जयवर्मन, विंध्यवर्मन, सुभट वर्मन आदि हुए थे।

गुर्जर–प्रतिहार वंश

अग्निकुल के राजपुत में सर्वाधिक प्रसिद्व प्रतिहार वंश को गुर्जर – प्रतिहार इसलिए कहा गया क्योंकि ये गुर्जरों की शाखा से संबंधित थे जिनकी उत्पत्ति गुजरात व दक्षिण – पश्चिम राजस्थान में हुई थी। स्मिथ ह्वेनसांग के वर्णन के आधार पर उनका मूल स्थान आबू पर्वत के उत्तर – पश्चिम में स्थित भीनमल मानते है। कुछ विद्वानों के अनुसार उनका मूल स्थान अवन्ति में था।

नागभट्ट प्रथम – (730 – 56 ई॰) सम्भवतः नागभट्ट प्रथम ही गुर्जर प्रतिहार वंश का संस्थापक था।

वत्सराज (783–95 ई॰) नागभट्ट प्रथम के दो भतीजे कक्कुक एवं देवराज के शासन के बाद देवराज का पुत्र वत्सराज गद्दी पर बैठा। उसने राजस्थान के मध्य भाग एवं उत्तर भारत के पूर्वी भाग को जीत कर अपने राज्य मे मिलाया।

नागभट्ट द्वितीय – (795 – 833 ई॰) वत्सराज के बाद उसका पुत्र नागभट्ट द्वितीय शासक हुआ। उसने गुर्जर – प्रतिहार वंश की प्रतिष्ठा को आगे बढाया। ग्वालियर अभिलेख के अनुसार उसने कन्नौज से चक्रायुध को भगाकर उसे अपनी राजधानी बनाया । मुंगेर के नजदीक उसने पाल वंश के शासक धर्मपाल को पराजित किया, परन्तु उसे राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द तृतीय से घर खानी पड़ी।

मिहिर भोज (836 – 89 ई॰) – रामभद्र का उत्तराधिकारी मिहिरभोज गुर्जर – प्रतिहार वंश का सर्वाधिक प्रतापी एवं महान शासक हुआ। उसने 836 ई॰ के लगभग कन्नौज को अपनी राजधानी बनाया जो आगामी सौ वर्षो तक प्रतिहारों की राजधानी बनी रही । भोज ने जब पूर्व दिशा की ओर अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहा तो उसे बंगाल के पाल शासक धर्मपाल से पराजित होना

पड़ा। 842 से 860 ई॰ के बीच उसे राष्ट्रकूट शासक ध्रुव ने भी पराजित किया। मिहिर भोज का साम्राज्य काठियावाड़, पंजाब, मालवा तथा मध्यदेश तक फैला था। मिहिर भोज ने 'आदिवराह' एवं 'प्रभास' उपाधियाँ धारण की । अरब यात्री सुलेमान के अनुसार वह अरबों का स्वाभाविक शत्रु था। उसने पश्चिम में अरबों का प्रसार रोक दिया था।

महेन्द्र पाल (890 – 910 ई॰) – ने साम्राज्य का विस्तार मगध एवं उत्तरी बंगाल तक किया।

गुप्त साम्राज्य

गुप्त साम्राज्य का उदय तीसरी सदी के अन्त में प्रयाग के निकट कौशाम्बी में हुआ। गुप्त कुषाणों के सामान्त थे। इस वंश का आरंभिक राज्य उत्तर प्रदेश और बिहार में था। यही से गुप्त शासक कार्य संचालन करते रहे और अनेक दिशाओं में बढ़ते गये। गुप्त शासकों ने अपना अधिपल अनुगंगा (मध्य गंगा मैदान), प्रयाग (इलाहाबाद), साकेत (आधुनिक अयोध्या), और मगध पर स्थापित किया। श्रीगुप्त (240 – 280 ई॰), घटोत्कच (280 – 319 ई॰), चन्द्रगुप्त प्रथम (319 – 335 ई॰)

समुद्रगुप्त (335 – 375 ई॰) – चन्द्रगुप्त प्रथम के बाद उसका पुत्र समुद्रगुप्त राजगद्दी पर बैठा। समुद्रगुप्त के दरबार में प्रसिद्व कवि हरिषेण रहता था, जिसने इलाहाबाद (प्रयाग) के प्रशस्ति लेख में समुद्रगुप्त के विजय अभियानों का उल्लेख किया है। उसने अपनी विजयों की उद्घोषणा हेतु ' अश्वमेघ यज्ञ' सम्पन्न करवाया था। समुद्रगुप्त के प्राप्त सिक्कों में कुछ पर 'अश्वमेघ पराक्रम' खुदा है उस पर उसे वीणावादन करते हुए दिखाया गया है।

सामाजिक स्थिति :– गुप्तकालीन भारतीय समाज परंपरागत 4 जातियों बाह्मणों को इस समय भी समाज मे सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। गुप्त काल में जाति प्रथा उतनी जटिल नहीं रह गयी थी। इस काल में शूद्रों द्वारा सैनिक वृत्ति अपनाने के भी प्रमाण मिलते है।

गुप्तकाल में अनेक मिश्रित जातियों का भी उल्लेख मिलता है जैसे अम्बष्ठ, पारशव, उग्र एवं करण आदि। इनमें मुख्य रूप से अम्बष्ठ, पारशव की संख्या गुप्तकालीन समाज में अधिक थी।

धार्मिक स्थिति :– गुप्तों का समय ब्राह्मण धर्म व हिन्दूधर्म के पुनरूत्थान का समय माना जाता है। हिन्दू धर्म विकास यात्रा के इस चरण में कुछ महत्त्वपूर्ण दृष्टिगोचर हुए जैसे :– मूर्तिपूजा हिन्दू धर्म का सामान्य लक्षण बन गयी, यज्ञ का स्थान उपासना ने ले लिया एवं गुप्त काल में ही वैष्णव एवं शैवधर्म के मध्य समन्वय स्थापित हुआ । ईश्वर भक्ति को महत्त्व दिया गया। तत्कालीन महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय के रूप में वैष्णव एवं शैव सम्प्रदाय प्रचलन में थे।

संगम युग

सूदूर दक्षिण में नवपाषाणकाल के पश्चात लौहे के उपकरण, काले व लाल रंग के भृद भाण्ड प्रयोग करने वाली 'महापाषणयुगीन संस्कृति' (1000 ई॰ पू॰ – 100 ई॰) का उदय हुआ। इस संस्कृति का ज्ञान 'संगम साहिल' से होने के कारण इसे 'संगम युग' कहा जाता है। 'संगम' वह परिषद अथवा गोष्ठी थे जिसमें तमिल कवियों ने एकत्र होकर अपनी रचनायें प्रस्तुत की। इस प्रकार के 3 संगम पाण्ड्य राजाओं के संरक्षण में सम्पन्न हुए। प्रथम संगम 'मदुरा' में अगस्त्य ऋषि (दक्षिण में आर्य सभ्यता के प्रसारक) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस संगम में रचे गये ग्रन्थ जैसे अकट्टियम, परिपदाल, मुदुनारै आदि में से कोई उपलब्ध नहीं हैं। द्वितीय संगम 'कपाटपुरम' में अगस्त्य ऋषि की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस संगम का एकमात्र अवशिष्ट ग्रन्थ तोल्काप्पियर कृत 'तोल्काप्पिम्' (व्याकरण ग्रन्थ) है। तृतीय संगम उत्तरी मदुरा में 'नक्कीरर' की अध्यक्षता में 'सम्पन्न हुआ। इस संगम से सम्बंधित साहिल को तीन भागों 1. पत्थुप्पातु 2. इत्युथोकै 3. पदिनेन कीलकन्कु में बाँटा जा सकता है। अवशिष्ट संगम साहिल इसी संगम से सम्बंधित है। संगम युग में महाकाव्यों की भी रचना

की गयी। ये है – शिल्पादिकारम् मणिमेखलै, जीवक चिन्तामणि, वलयपति तथा कुण्डलकेशि, यद्यपि ये ग्रन्थ संगम साहिल के अन्तर्गत नहीं आते।

पल्लव वंश

काँची के पल्लव वंश के विषय में प्राथमिक जानकारी हरिषेन की 'प्रयाग प्रशस्ति' एवं ह्वेनसांग के यात्रा विवरण से मिलती है। सम्भवत : पल्लव लोग स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने से पूर्व सातवाहनों के सामन्त थे। इनके प्रारम्भिक अभिलेख 'प्राकृतभाषा' में एवं वाद के 'संस्कृत' में मिले है।

पल्लवों के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक उत्कर्ष का केन्द्र कांची थी किन्तु उनका मूल निवास स्थान तोण्डमण्डलम् था। कालान्तर में उनका साम्राज्य उत्तर में पेन्नार नदी से दक्षिण में कावेरी नदी के घाटी तक विस्तृत हो गया।

शिवस्कन्द वर्मन – प्राकृत भाषा के ताम्रलेखों से पता चलता है, कि प्रथम पल्लव शासक सिंह वर्मा था। उसने कांची को अपनी राजधानी बनाया था।

विष्णुगोप – प्रयाग प्रशस्ति के विवरण से स्पष्ट होता है, कि जिस समय समुद्र गुप्त ने दक्षिणापथ को जीता उस समय कांची पर विष्णुगोप शासन कर रहा था। विष्णु के बाद ईसा की 5वीं एवं 6 वीं शताब्दी में पल्लवों का इतिहास अँधरे में था।

सिंह विष्णु – (575 – 600 ई॰) सिंह विष्णु के समय में पल्ल्व इतिहास का नया अध्याय शुरू हुआ। सिंह विष्णु के दरबार में संस्कृत का महान कवि भारवि रहता था। यह वैष्णव धर्म का अनुयायी।

महेन्द्र वर्मन प्रथम (600–30 ई॰) – यह सिंह विष्णु का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। उसके समय में पल्लव साम्राज्य न केवल राजनीतिक दृष्टि से बल्कि सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं कलात्मक दृष्टि से भी अपने चरमोत्कर्ष पर था।

नरसिंह वर्मन प्रथम 630 – 68 ई॰ , महेन्द्र वर्मन II- 668 -70 ई॰, परमेश्वर वर्मन प्रथम 670 – 95 ई॰,

नरसिंह वर्मन II- 695 -720 ई॰ , परमेश्वर वर्मन द्वितीय 720 – 31 ई॰, नंदि वर्मन II- 731 - 95 ई॰,

दंतिवर्मन 796 – 847 ई॰, नंदिवर्मन III - 847 – 69 ई॰ , नृपतुंग वर्मन (870–79 ई॰),

अपराजित (870–79 ई॰) – नृपत्तुंग को अपदस्थ कर अपराजित पल्लव वंश के अंतिम शासक के में सिंहासन पर बैठा। उसके समय में चोल शासक आदित्य प्रथम ने 'तोंडमंडलम्' पर अधिकार कर लिया। अपराजिता के बाद नन्दिवर्मा III, नन्दिवर्मा IV, कल्पवर्मा आदि कुछ समय तक शासन किये लेकिन असफल रहे।

चोल राजवंश

चोलों के विषय में प्रथम जानकारी पाणिनी कृत 'अष्टाध्यायी' से मिलती है। इस विषय में जानकारी के अन्य स्त्रोत हैं – कात्यायन कृत वार्तिक, महाभारत, संगम साहित्य, 'पेरिप्लस' ऑफ दी इरीथ्रियन सी.' एवं टॉलमी का उल्लेख आदि। चोल राज्य आधुनिक कावेरी नदी घाटी, कोरोमण्डल, त्रिचिरापल्ली एवं तंजोर तक विस्तृत था। साक्ष्यों के आधार पर माना जाता है , कि इनकी पहली राजधानी 'उत्तरी मनलूर' थी। कालान्तार में उरैयूर तथा तंजावुर चोलो की राजधानी बनी। चोलों का शासकीय चिन्ह बाघ था। चोल राज्य किल्लि, बलावन, सोम्बिदास तथा नेनई जैसे नामों से भी प्रसिद्व है।

उरवप्पीर्रे इलन जेल चेन्नी :– यह चोल राजवंश का प्रथम शासक था। उसने अपनी राजधानी उरैयर में स्थापित की। वैलिर वंश से उसके वैवाहिक सम्बंध थे।

करिकाल :– यह प्रारम्भिक चोल शासकों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शासक था। इसे 'जले हुए पैरों वाला' कहा गया है। अनुमानत : इस शासक ने 190 ई॰ में शासक किया। इस साम्राज्य विस्तारवादी शासक ने अपने शासन के आरम्भिक वर्षों में 'वण्णि नामक स्थान पर वेलरि तथा अन्य ग्यारह शासकों की संयुक्त सेना को पराजित कर प्रसिद्वि प्राप्त किया। इस प्रकार करिकाल ने पूरे तमिल प्रदेश को अपनी भुजाओं के पराक्रमी शासक था। इसके समय उद्योग तथा व्यापार उन्नति की अवस्था में थे।

करिकाल के बाद उत्तराधिकार के लिए गृहयुद्व हुआ। करिकाल के दो पुत्र नलन्गिल्लित एवं नेडुंजेलि ने दो राजधानियों से अलग – अलग शासन किया। बड़े पुत्र ने उरैयुर से तथा छोटे पुत्र ने पुघर से शासन किया। बड़े पुत्र ने उरैयुर से तथा छोटे पुत्र ने पुघर से शासन किया। इस वंश का करिकाल के बाद अंतिम महान शासक नेडुजेलियन था। उसने सफलता पूर्वेक पाण्ड्यों तथा चेरों के विरूद्व लड़ाई लड़ी। उसकी मृत्यु युद्वक्षेत्र में हुई। उसकी प्रशंसा में संगम साहित्य में अनेक कविताओं का उल्लेख मिलता है। ईसा की तीसरी शताब्दी से 9 वी शताब्दी तक चोलों का इतिहास अंधेरे में था, पर 9 वीं शताब्दी के मध्य में ही चोल नरेश विजयालय ने चोल शक्ति का पुनः उद्वार किया।

महमूद गजनवी

महमूद गजनवी (नवंबर 971 – 30 अप्रैल 1030) मध्य अफगानिस्तान में केन्द्रित गजनवी वंश का एक महत्वपूर्ण शासक था जो पूर्वी ईरान भूमि में साम्राज्य विस्तार के लिए जाना जाता है।वह तुर्क मूल का था और अपने समकालीन (और बाद के) सल्जूक तुर्कों की तरह पूर्व में एक सुन्नी इस्लामी साम्राज्य बनाने में सफल हुआ। उसके द्वारा जीते गए प्रदेशों में आज का पूर्वी ईरान, अफगानिस्तान और संलग्न मध्य–एशिया (सम्मिलिलित रूप से खोरासान), पाकिस्तान और उत्तर–पश्चिम भारत शामिल थे। उनके युद्धों में फातिमी सुल्तानों (शिया), काबुल शाहिया राजाओं (हिन्दू) और कश्मीर का नाम प्रमुखता से आता है। भारत में इस्लामी शासन लाने और आक्रमण के दौरान लूटपाट मचाने के कारण भारतीय हिन्दू समाज में उनको एक आक्रामक शासक के रूप में जाना जाता है।

वह पिता के वंश से तुर्क था पर उसने फारसी भाषा के पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हॅांलांकि उसके दरबारी कवि फिरदौसी ने शाहनामे की रचना की पर वो हमेशा कवि का समर्थक नहीं रहा था। गजनी, जो मध्य अफगानिस्तान में स्थित एक छोटा शहर था, को उन्होंने साम्राज्य के धनी और प्रांतीय शहर के रूप में बदल गया। बगदाद के इस्लामी (अब्बासी) ख़लीफा ने उनको सुल्तान की पदवी दी।

सामरिक विवरण :–

997 :– काराखानी साम्राज्य।

999 :– खुरासान, बल्ख हेरात और मर्व पर सामानी कब्जे के विरुद्ध आक्रमण। इसी समय उत्तर से काराखानियों के आक्रमण की वजह से सामानी साम्राज्य तितर बितर।

1000:– सिस्तान, पूर्वी ईरान।

1001:– गांधार में पेशावर के पास जयपाल की पराजय। जयपाल ने बाद में आत्महत्या कर ली।

1002:– सिस्तानः– खुलुफ को बन्दी बनाया।

1004:— भाटिया (ठीमतं) को कर न देने के बाद अपने साम्राज्य में मिलाया।

1008:— जयपाल के बेटे आनंदपाल को हराया।

गोर और अमीर सुरी को बंदी बनाया। गजना में अमीर सुरी मरा। सेवकपाल को राज्यपाल बनाया। अनंदपाल कश्मीर के पश्चिमी पहाड़ियों में लोहारा को भागा। आनंदपाल अपने पिता की मृत्यु (आत्महत्या) का बदला नहीं ले सका।

1005:— बल्ख और खोरासान को नासिर प्रथम के आक्रमण से बचाया। निशापुर को सामानियों से वापिस जीता।

1005:— सेवकपाल का विद्रोह और दमन।

1008:— हिमाचल के कांगरा की संपत्ति कई हिन्दू राजाओं (उज्जैन, ग्वालियर, कन्नौज, दिल्ली, कालिंजर और अजमेर) को हराने के बाद हड़प ली।

ऐतिहासिक कहानियों के अनुसार गखर लोगों के आक्रमण और समर के बाद महमूद की सेना भागने को थी। तभी आनंदपाल के हाथी मतवाले हो गए और युद्ध का रुख पलट गया।

1010:— गोर, अफगानिस्तान।

1005:— मुल्तान विद्रोह, अब्दुल फतह दाउद को कैद।

1011:— थानेसर।

1012:— जूरजिस्तान

1012:— बगदाद के अब्बासी खलीफा से खोरासान के बाकी क्षेत्रों की मांग और पाया। समरकंद की मांग ठुकराई गई।

1013:— ठनसदंजः— त्रिलोचनपाल को हराया।

1014 :— काफिरिस्तान पर चढ़ाई।

1015:— कश्मीर पर चढ़ाई — विफल।

1015:— खॣवारेज्म — अपनी बहन की शादी करवाया और विद्रोह का दमन।

1017:— कन्नौज, मेरठ और यमुना के पास मथुरा। कश्मीर (?) से वापसी के समय कन्नौज और मेरठ का समर्पण।

1021:— अपने गुलाम मलिक अयाज को लाहोर का राजा बनाया।

1021:— कालिंजर का कन्नौज पर आक्रमण रू जब वो मदद को पहुंचा तो पाया कि आखिरी शाहिया राजा त्रिलोचनपाल भी था। बिना युद्ध के वापस लौटा, पर लाहौर पर कब्जा। त्रिलोचनपाल अजमेर को भागा। सिन्धु नदी के पूर्व में पहला मुस्लिम गवर्नर नियुक्त।

1023:— लाहौर। कालिंजर और ग्वालियर पर कब्जा करने में असफल। त्रिलोचनपाल (जयपाल का पोता) को अपने ही सैनिकों ने मार डाला। पंजाब पर उसका कब्जा। कश्मीर (लोहरा) पर विजय पाने में दुबारा असफल।

1024 :— अजमेर, नेहरवाला और काठियावाड़ रू आखीरि बड़ा युद्ध।

1025–26 :– सोमनाथरू मंदिर को लूटा। गुजरात में नया राज्यपाल नियुक्त और अजमेर के राजपूतो से बचने के लिए थार मरुस्थल के रास्ते का सहारा लिया द्य

1027:– रे, इस्फाहान और हमादान (मध्य और पश्चिमी ईरान में)– बुवाही शासकों के खिलाफ।

1028, 1029 :– मर्व और निशापुर, सल्जूक तुर्कों के हाथों पराजय।

मोहम्मद गोरी

गोरी राजवंश की नीव अला–उद–दीन जहानसोज ने रखी और सन् ११६१ में उसके देहांत के बाद उसका पुत्र सैफ–उद–दीन गोरी सिंहासन पर बैठा। अपने मरने से पहले अला–उद–दीन जहानसोज ने अपने दो भतीजों – शहाब–उद–दीन (जो आमतौर पर मुहम्मद गोरी कहलाता है) और गियास–उद–दीन – को कैद कर रखा था लेकिन सैफ–उद–दीन ने उन्हें रिहा कर दिया। उस समय गोरी वंश गजनवियों और सलजूकों की अधीनता से निकलने के प्रयास में था। उन्होंने गजनवियों को तो ११४८–११४६ में ही खत्म कर दिया था लेकिन सलजूकों का तब भी जोर था और उन्होंने कुछ काल के लिए गोर प्रान्त पर सीधा कब्जा कर लिए था, हालांकि उसके बाद उसे गोरियों को वापस कर दिया था।

सलजूकों ने जब इस क्षेत्र पर नियंत्रण किया था जो उन्होंने सैफ–उद–दीन की पत्नी के जेवर भी ले लिए थे। गद्दी ग्रहण करने के बाद एक दिन सैफ–उद–दीन ने किसी स्थानीय सरदार को यह जेवर पहने देख लिया और तैश में आकर उसे मार डाला। जब मृतक के भाई को कुछ महीनो बाद मौका मिला तो उसने सैफ–उद–दीन को बदले में भाला मरकर मार डाला। इस तरह सैफ–उद–दीन का शासनकाल केवल एक वर्ष के आसपास ही रहा। गियास–उद–दीन नया शासक बना और उसके छोटे भाई शहाब–उद–दीन ने उसका राज्य विस्तार करने में उसकी बहुत वफादारी से मदद करी। शहाब–उद–दीन (उर्फ मुहम्मद गोरी) ने पहले गजना पर कब्जा किया, फिर ११७५ में मुल्तान और ऊच पर और फिर ११८६ में लाहौर पर। जब उसका भाई १२०२ में मरा तो शहाब–उद–दीन मुहम्मद गोरी सुलतान बन गया।

15 मार्च १२०६ में आधुनिक पाकिस्तान के झेलम क्षेत्र में नदी के किनारे मुहम्मद गोरी को खोखर नामक जाटों उपसमूह के लोगों ने बदला लेने के लिए मार डाला। मुहम्मद गोरी का कोई बेटा नहीं था और उसकी मौत के बाद उसके साम्राज्य के भारतीय क्षेत्र पर उसके प्रिय गुलाम कुतुब–उद–दीन ऐबक ने दिल्ली सल्तनत स्थापित करके उसका विस्तार करना शुरू कर दिया। उसके अफगानिस्तान व अन्य इलाकों पर गोरियों का नियंत्रण न बच सका और खवारेज्मी साम्राज्य ने उन पर कब्जा कर लिया। गजना और गोर कम महत्वपूर्ण हो गए और दिल्ली अब क्षेत्रीय इस्लामी साम्राज्य का केंद्र बन गया। इतिहासकार सन् १२१५ के बाद गोरी साम्राज्य को पूरी तरह विस्थापित मानते हैं।

****